International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(1): 10-12

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(1): 10-12
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 04-11-2018
Accepted: 07-12-2018

**डॉ. सुनीता शर्मा**
संस्कृत विभाग, व्याख्याता–राज.
मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर,
राजस्थान, भारत

**Correspondence**
**डॉ. सुनीता शर्मा**
संस्कृत विभाग, व्याख्याता–राज.
मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर,
राजस्थान, भारत

# मीराँ बाई के पदों की प्रामाणिकता

## डॉ. सुनीता शर्मा

**प्रस्तावना**

भक्त कवयित्री मीराँ बाई की छाप से युक्त संगीत–सुधा सिंचित भक्ति पदों का प्रसार समस्त भारत में व्याप्त है। उनकी अमरवाणी किसी एक प्रदेश की सम्पत्ति नही रह गयी है, वह समस्त भारत की ही नहीं भारत की सीमाएँ लांघकर दूर देशान्तरों तक की भी अमूल्य निधी बन गयी है। भारत वर्ष में बंगाल से लेकर गुजरात और काश्मीर से कन्याकुमारी पर्यन्त उनकी वाणी का प्रसार है। बंगाली, मराठी, सिंधी, पंजाबी आदि की अहिन्दी भाषी जनता ने तो मीराँ को अपनी भाषा के कवियों से भी अधिक सम्मान दिया ही है, पर तमिल, तेलगु, मलयालम और कन्नड़ भाषी प्रदेशों तक में जहां भाषा की भिन्नता के कारण अन्य कवियों की पहुँच नहीं हो पायी है, वहां भी मीराँ का नाम अत्यधिक श्रद्धा के साथ लिया जाता है। मीराँ के व्यक्तित्व और उसकी वाणी में सम्मोहन ही कुछ ऐसा है कि उसके सामने भाषा, संप्रदाय और प्रान्तों की सीमा के बन्धन नहीं टिक पाये।

मीराँ की वाणी गत पांच सौ वर्षो में जहां–जहां भी अपना प्रसार पाती गयी और भाषा–भेद के अनुसार अपना रूप भी बदलती गयी। यही नहीं अनेक भक्तों और संगीतज्ञों ने भी नवीन पदों की संरचना करके मीराँ की छाप के साथ मूल पदों में वर्णित घटनाओं को बार–बार दोहराया है। कई नवीन असंभाण्य घटनाओं को भी उनमें भरा है और यह क्रम आज तक चल रहा है।

ऐसी स्थिति में मींरा द्वारा रचित मूल पदों का पता लगा पाना एक समस्या बन गयी है। मौखिक परम्परा में प्रचलित रहते हुए रूप बदलते पदों की प्रामाणिकता तो संदिग्ध है हि, समय–समय पर इन पदों के तैयार किये गये संग्रह भी प्रामणिकता की दृष्टि से संदेह से परे नही है।

मीराँ के पदों के ऐसे कई एक संग्रह जो समय–समय पर तैयार किये प्राप्त होते है। आधुनिक युग में भी इस प्रकार तैयार किये गये प्राचीन संकलनों तथा संतो, भक्तों के पद–संग्रह युक्त हस्तलिखित ग्रन्थों में यत्र–तत्र उपलब्ध मीराँ के पदों को आधार बनाकर कई संग्रह ग्रंथ तैयार कर प्रकाशित किये गये है और उन्हें मीराँ के प्रमाणिक पद की संज्ञा दी गयी है और अनेक शोध ग्रंथ भी लिखे गये हैं, फिर भी पदों की प्रामाणिकता और मीराँ के जीवन से संबंधित अनेक गुत्थियाँ अभी तक अनसुलझी ही पड़ी हुई हैं।

मीराँ का भारतीय साहित्य और समाज में जो महत्त्व है, वह उनके इन भक्ति परक पदों के कारण ही है अतः उनके जीवन से संबंधित अधिकांश साहित्य संत कवियों और उनकी कृतियों के टीकाकारों द्वारा ही लिखा मिलता है।[1]

मीराँ और उनके पदों के संबंध में न जाने क्यों हमारे साहित्य मनीषियों की उदासीनता अभी तक ज्यों की त्यों बनी हुई है। आज हमारे पास मीराँ के पदों का एक भी ऐसा संग्रह नही है, जिसे पूर्णतया प्रामाणिक कहा जा सके। सच तो यह है कि जब तक पदों की प्राचीनतम हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त नही हो जाती, पदों का ठीक–ठीक संपादन नहीं किया जा सकता और यदि किया जाता भी है तो उस पर प्रामाणिकता की (मुहर) मोहर नहीं लगायी जा सकती।

पदों की प्रामाणिकता के लिए आवश्यक है कि मीराँ के जीवन से संबंधित घटनाओं की प्रामाणिकता सिद्ध की जाय। मीराँ की शिक्षा, भाषा ज्ञान, पदों की रचना का प्रामाणिक या आनुमानिक काल का पता लगाया जा सके।

**भाषा के आधार पर पदों की प्रामणिकता**

मीराँ का जन्म मारवाड़ प्रान्त में मेड़ता के पास कुड़की ग्राम में सं. 1555 में हुआ माना जाता है। अपने जीवन के 15 वर्ष इसी ग्राम में अपने दादा के आश्रय में रहकर तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार मीराँ ने शिक्षा भी राजपरिवार में रहते हुए प्राप्त की। वह शिक्षा मारवाड़ की लोक प्रचलित लोक भाषा ही रही होगी।

मेड़ता राजस्थान का केन्द्रस्थ स्थान होने से वहां की लोकभाषा अत्यधिक प्रांजल और राजस्थान के समस्त क्षेत्रों में समझी जाने योग्य भाषा रही है। उसकी स्थिति आज भी वैसी ही है। अतः मीरां की आजीवन व्यवहार की भाषा यही मेड़ता के परितः प्रचलित भाषा ही रही होगी। विवाह के उपरान्त चित्तौड़ में स्थानान्तरित हो जाने पर भी उसका दैनन्दिन कार्य अपने पीहर की भाषा से चलता रहा – क्योंकि मेड़ता और चित्तौड़ मंडल की भाषा में कोई उल्लेख योग्य अन्तर न था। मेड़ता की भाषा में प्राप्त सौष्ठव तथा काव्योपयोगिता भी अपनी समृद्ध स्थिति में रहा है। राजस्थान में उस युग में साहितय सृजन या तो डिंगल में होता रहा है या स्थानीय बोलचाल की भाषा के शिष्ट रूप में। अतः मीरां के पदों की रचना किसी अन्य भाषा में हुई हो तो ऐसी कल्पना करना उचित नहीं प्रतीत होता।

ब्रजभाषा में, गुजराती में, पंजाबी आदि अन्य भाषाओं में जो पद प्राप्त होते है वे सभी मीरां की ख्याति विस्तार के साथ–साथ मूल राजस्थानी भाषा निबद्ध पदों के परिवर्तित रूप, अनुकरण पर रचित या मौखिक परम्परा में भक्तगण द्वारा विकृत रूप ही है। मूल पदों की भाषा राजस्थान ही नहीं राजस्थान के बाहर भी व्यापक क्षेत्र में समझी जाने वाली भाषा होने के कारण मीरां को गुजराती या ब्रज भाषा सीखने और उसमें रचना करने की कोई आवश्यकता भी नहीं थी। और यदि मीरां ने इन भाषाओं को सीखा भी हो तो भी उनकी रचनाओं में इतनी स्वाभाविकता नही आ सकती थी, जितने हमें मीरां के ब्रजभाषा या गुजराती में रचित मीरां के पदों में मिलती है। यह कहना कि तद्युगीन राजस्थान और गुजराती में बहुत अधिक साम्य था – भी सही नही है। एक सी शब्द सम्पदा के धनी होते हुए भी इन दोनों भाषाओं के शब्द–स्वरूप में पर्याप्त अन्तर है – उनकी प्रकृति, अभिध्वानिकी स्थिति काफी भिन्न है। इन दोनों भाषाओं के व्याकरणिक निर्देश यथा – क्रिया कारक, सर्वनाम आदि में भी पर्याप्त अन्तर है। ऐसी स्थिति में एक दूसरे के व्यवहार क्षेत्र में समझी जा सकने पर भी दोनों भाषाओं में बहुत दूरी है।

जहां तक मीरां के पदों के प्राचीनतम संकलनों की गुजरात में अविस्थिति का प्रश्न है – ये प्रतियां राजस्थानी भाषा की है पर प्रतिलिपिकर्ताओं और पाठ संपादकों में लिपि और भाषा ज्ञान की कमी के कारण उन्होंने अर्थ का अनर्थ कर दिया है। सं. 2006 में कलकत्ता में ललिता प्रसाद सुकुल ने सर्वप्रथम डाकोर (सौराष्ट्र गुजरात) में उपलब्ध 'मीरा' पदावली का प्रकाशन कराया।

उसमें 69 पद हैं। इसी के साथ 34 पद काशी के सेठ लाला गोपाल दास के संग्रहालय की सं. 1727 की प्रति के भी भाषा साम्य के आधार पर प्रकाशित कराये गये है। डाकोर की प्रति सं. 1643 वि. की कहीं गयी है डाकोर की प्रति का प्रकाशन कालान्तर में श्री परशुराम चतुर्वेदी ने कराया था। पूर्वोद्धृत संपादक ललिता प्रसाद सुकुल का अनुकरण करते हुए या फिर उनको भी लिपि और भाषा का ज्ञान नही था। इन प्रतियों की भाषा विशुद्ध राजस्थानी है– पर संपादक गणों ने सर्वत्र न को ण पढ़कर प्राचीन अर्द्ध मागधी प्राकृत की स्थिति में पहुंचा दिया है। समझ में नही आता कि उन्होंने ऐसा क्यों किया। इसी प्रकार ळ और ल अक्षर को उन्होंने अक्षर की स्थिति और मोड़ को न समझकर सर्वत्र 'ड़' कर दिया है। यह मात्र डाकोर की प्रति में ही किया गया हो, ऐसा नही है, काशी की प्रति के पाठ में भी ऐसा ही किया गया है।

कतिपय उदाहरण आपके समक्ष रख रही हूं –
जिससे मेरे कथन की पुष्टि हो सकेगी।
म्हारा री गिरधर गोपाड़ दूसरां णा कूयां।
दूसरां णा कोयां, साधां सकड़ डोक जूयां।।
णन्द णन्दण मण भायां बादड़ां णभ छायां।
णेणां ड़ोभा आटकां, शक्यां णा फिर आय।
णेणां चंचड़ अटक णा याण्या पर हाथ गया बिकाय''
सजणी कब मिड़ग्या पिव म्हारां।
चरण कवड़ गिरधर शुख देरण्यां राख्यां णेणां णेरा ।
राणा विषय रो प्याडो भेज्या, पीय मगठा हूयां।
भज मण चरण कवड़ अवणासी ।
माई री म्हां लिया गोविन्दा मोइ,
थे कह्या छाणे म्हां कां चोडे दिया बजंता दोड़ ।

इसी प्रकार चालां के स्थान पर चांडा, जमना के स्थान पर जमणां, कुंडल के स्थान पर कुंडड़, झलक्या के स्थान पर झडक्या, म्हानै के स्थान पर म्हाणै, नीका के स्थान पर णीका, निरमल के स्थान णिरमड़ प्रयोग दिखाई देता है। मूल प्रतियों में यह दोष नही है, लिपि ज्ञान और भाषा के अभाव में प्रतिलिपिकर्ता और संपादको के ही माथे यह दोष मढ़ा जाना चाहिए।

इसी प्रकार वे पद जो राजस्थानी भाषा में तो रचित है, पर उनमें स्पष्ट रूप से आधुनिक राजस्थानी की झलकी मिलती है भी मीरां के मूल पद नहीं माने जा सकते उनमें कई एक पद मूल पदों के ही रूपान्तरण है, तो कई एक की रचना आधुनिक काल में ही की गई प्रतीत होती है जिसमें मीरा की छाप लगा दी गयी है।

जैसा कि प्रारंभ में ही उल्लेख कर दिया गया है मीरां को ब्रजभाषा की शिक्षा नही मिली थी और न मीरां का निवास ब्रजमंडल में इतना अधिक रहा कि वह ब्रजभाषा में पदों की रचना कर सकती। जहाँ तक ब्रज प्रदेश के वल्लभ संप्रदाय के गुंसाइयो से मीरा के सम्पर्क की बात कही जाती है वह भी प्रामाणिक नही कहीं जा सकती यदि रही भी तो इतनी स्वल्पकालिक रही होगी कि उस प्रभाव से वह अपनी मातृभाषा को छोड़कर ब्रजभाषा में रचना करने लगी हो सम्भव नही लगता। स्पष्ट है कि सभी पद प्रक्षिप्त है, या रूपान्तरित।

विदेशी शब्दों का प्रयोग मीरां में अधिक नहीं है जो है वे अरबी फारसी के हैं, जो शब्द हमारे जीवन में प्रवेश कर गए हैं, उन्हें भारतीय परिवार की सदस्यता देना आवश्यक है अरबी फारसी शब्दों का प्रयोग भी मीरा में अधिक नही है।

अरबी – अरजी, जौहर, कीमत, अरज, जौहरी
फारसी शब्द – चाकर–चाकरी, दिवाणी–दीवानी, खरची–खर्ची, दर–दरद, प्याली–प्याला।

मीरा इस्लाम संस्कृति से प्रभावित क्षेत्र आगरा, दिल्ली में अधिक नही रही। ब्रज की यात्रा के समय उधर से गुजरी भर थी अत अरबी, फारसी के वे ही प्रयोग मीरां के पदों में मिलते है, जो कदाचित तत्कालीन लोक भाषा में घुलमिल कर उसी शब्द समाज के अंग बन गये थे।

मीरां का जन्म मेड़ता (मारवाड़) में हुआ था। मातृभाषा मारवाड़ी के अतिरिक्त मीरां का घनिष्ठ संपर्क मेवाड़ ब्रज और गुजरात की तत्कालीन भाषाओं से था। मीरां की भाषा प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी है।

जिन्हें गुजराती और मारवाड़ी नाम से जाना जा सकता है। प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी का युग ईसा की 16वीं शता. के अन्त तक तो रहा होगा। मीरां के समय तक आते–आते यह रूढ साहित्यिक रूप हो गया होगा । मीरा के पदों में तत्कालीन मारवाड़ी के स्थानीय प्रयोगों का होना भी है।

मीरां के पदों में नाथपंथ, रैदासी संप्रदाय, निर्गुण संप्रदाय या अन्य संप्रदायों की शब्दावली प्राप्त है। यह सत्य है कि मूल पदावली की भाषा और भाव धारा के अनुसार मीरां सम्प्रदाय मुक्त वैष्णवी थी, पर नाथ संप्रदाय और रैदासी संप्रदाय का उस काल में मेवाड़ और मारवाड़ में पूरा प्रभाव होन`से यदि मीरां के पदों में ऐसी शब्दावली आ गई हो तो वह स्वाभाविक था। ऐस पदों की प्रमाणिकता भी सावधानीपूर्वक निश्चित की जा सकती है।

गुजरात में भी मीरां अधिक नही रह पाई और न मीरा को गुजराती का विशेष ज्ञान ही था । अतः गुजराती में प्राप्त पद भी मीरां के मूल पद नहीं माने जा सकते । पंजाब और महाराष्ट्र आदि से तो मीरां का दूर का भी संबंध नही था। अतः पंजाबी, महाराष्ट्री में

प्राप्त पदों की रचना कालान्तर में इन पदों की उक्त प्रदेशों में प्रसार का प्रभाव ही कहा जा सकता है। ब्रज या गुजराती की भांति ही इनमें भी मीरां के पदों का भाषा रूपान्तरण ही हुआ है और साथ ही नवीन रचना भी।

नाभादास कृत भक्तमाल, प्रियादास कृत भक्तमाल की भक्ति रस बोधिनी टीका, बालकराम कृत दांम गुण चित्रणी टीका, ध्रवदासकृत भक्त नामावली, महाराजा रघुराजसिंह कृत रामरसिका वली भक्त माला, संत चंद दास कृत भक्त विहार, हरिराम व्यास कृत चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता, मौथिल चंद दत्त शर्मा कृत भक्तमाल आदि ऐसी रचनाएं है। जिनमें भक्त कवियों के साथ–साथ मीरां के जीवन से संबंधित कथाएं भी दी गयी है। मीरों के चरित्र को आधार बनाकर रची गई कई स्वतन्त्र रचनाएं भी मिलती है। गुजराती कवि दयाराम कृत मीरा चरित्र, राधाबाई कृत मीरां माहात्म्य, सुखसारण कृत मीरांबाई की परची अज्ञात कृत परची मीरा बाई आदि ऐसी ही रचनाऐं है। जिनमें अधिकांश अक्षरश या सार स्वरूप में प्रकाशित भी हो गई है।